लिखने और पढ़ने का सम्बंध

सूसन सोनटैग

उपन्यास पढ़ना मुझे बहुत ही सामान्य क्रियाकलाप लगता है, जबकि लिखना एक बहुत ही विषम बात... कम से कम मैं तब तक ऐसा सोचती हूं, जब तक कि मैं स्वयं को यह याद नहीं दिलाती कि दोनों बातें, आपस में कितनी निकटता से जुड़ी हैं। (यहां कोई प्रच्छन्न व्यापकता की बात नहीं, बस चंद टिप्पणियां हैं)।

पहला, चूंकि लिखने के मायने हैं एक खास सघनता और सतर्कता के साथ अभ्यास करना। आप लिखते हैं, आपने जो लिखा है उसे पढ़ेने के लिए ताकि यह देख सकें कि यह ठीक है या नहीं, और जैसा कि हमेशा होता है, वह ठीक नहीं होता, तो फिर लिखते हैं- एक बार, दो बार या जितनी बार भी आवश्यकता हो कि कुछ ऐसा बन सके जो दोबारा पढ़ते हुए झेले जा सकने लायक हों ''लिखने का अर्थ है स्वयं पर फैसला देना'', इब्सन ने अपनी एक पुस्तक के एक पन्ने पर अंकित किया था। पढ़ने के बिना लिखने की कल्पना करना मुश्किल हैं।

लेकिन क्या आप जो पहली बार सीधे लिख देते हैं, कभी ठीक नहीं होता? हां, होता है, कई बार तो ठीक से भी अच्छा होता हैं और इससे कुछ भी हो इस उपन्यासकार को यही संकेत मिलता है कि अगर बारीक नजर से देखें या जोर से पढ़े- यानी दूसरी पाठ करें - तो संभव है वह और भी अच्छा हो जाए। मैं यह नहीं कह रही हूं कि एक लेखक को कुछ अच्छा लिखने के लिए जबर्दस्त पसीना बहाना पड़ता हैं।

डॉ. जॉन्सन का कहना है कि,''जो सामान्यतः बिना प्रयत्न के लिखा जाता है वह बिना आनंद के पढ़ा जाता है'' और यह सूत्र आज की दुनिया से उतना ही दूर लगता है, जितना कि इसका लेखक। निश्चिय ही, ऐसा काफी कुछ जो बिना प्रयास के लिखा जाता है वह बहुत आनंददायी होता हैं। नहीं, सवाल पाठक के निर्णय का नहीं है- जो संभव है जो लेखक के अधिक स्वतःस्फूर्त, कम विशद काम को पसंद करे - बल्कि लेखकों की भावना का है, जो कि असंतुष्टता के पैरोकार हैं। आप सोचते हैं, ''यदि पहली बार में ही मैं इसे यहां तक ला सकता हूं, या ला सकती हूं, बिना बहुत अधिक संघर्ष के, क्या यह इससे भी बेहतर नहीं हो सकता था?''

हालांकि दोबारा लिखना - और दोबारा पढ़ना - मेहनत जैसा सुनाई पड़ता है, असल में ये लेखन का सबसे आनंददायी हिस्सा हैं। कई बार मात्र यही आनंदप्रद क्षण होते हैं। लिखने बैठना, यदि आपके दिमाग में 'साहित्य' की कोई समझ है, तो एक कठिन और आतंककारी काम है। एक बर्फीली

झील में डुबकी-सा। फिर गुनगुना हिस्सा आता है- जब आपके पास कुछ करने के लिए होता है, सुधारने और संपादित करने के लिए।

चलिए मानते हैं, यह बहुत उलझा हुआ है। किंतु उसे सुधारने का आपके पास मौका है। आप अधिक से अधिक स्पष्ट होने की कोशिश कीजिए। या गहरे होने की, या अधिक मुखर होने की या अधिक नवीन होने की। आप उस संसार के प्रति ईमानदार होने की कोशिश करते है। आप चाहते है कि पुस्तक ज्यादा खुली और आधिकाधिक हो। आप स्वयं को अपने आपसे अलग करना चाहते हैं। आप अपनी पुस्तक को अपने-निराश मानस से अलग करना चाहते हैं। जैसे कि संगमरमर के एक चौकोर टुकड़े पर ही कोई मूर्ति छिपी होती है, उसी प्रकार उपन्यास आपके दिमाग में होता है। आप उसे मुक्त करने की कोशिश करते हैं। जैसी कि आप चाहते हैं- अपने उल्लास की तरंग में आप जो जानते हैं कि यह होना चाहिए। आप वाक्यों को बार-बार पढते हैं। क्या यही वह पुस्तक है जो मैं लिख रहा हूं? बस यही सब है?

या कहिए कि सब ठीक चल रहा है; क्योंकि कई बार ठीक चलता है। (यदि कई बार यह ठीक नहीं चले, तो आप पागल हो जाएंगे)। आप चाहे, तो सबसे धीमे लिखने वाले भी हैं या खराब टाइपिंग जानते हैं, तब भी शब्दों की श्रृंखला बनती जा रही है और आप चलते रहना चाहते हैं, और तब आप उसे पढ़ते हैं। संभवतः आप संतुष्ट होने की हिमाकत करें, लेकिन इसके साथ ही अपने जो लिखा है उसे पसंद करते हैं। आप स्वयं- सामने पृष्ठ पर जो है--उससे आनंद महसूस करते हैं, एक पाठक का आनंद।

आखिरकार लेखन उन सब इजाजतों की एक श्रृंखला है जो आप स्वयं को किन्हीं खास वजहों से अर्थपूर्ण होने के लिए देते हैं। नया खोजने के लिए। छलांग मारने के लिए। उड़ने के लिए। गिरने के लिए। कहने का स्वयं का एक खास तरीका हासिल करने और उस पर जोर देने के लिए; यानी स्वयं की आंतरिक आजादी पाने के लिए। बिना अधिक स्वनिंदा के सख्त रहने के लिए। बार-बार पढ़ने से अकसर न बचने के लिए। सब ठीक-ठाक चल रहा है (या बहुत खराब नहीं है) ऐसा सोचने की स्वयं को आजादी देने के लिए जिससे कि आगे बढ़ते रहें। प्रेरणा के धक्के के लिए बिना रुके। अंधे लेखक जो बोल कर लिखवाते हैं उसे दोबारा कभी नहीं पढ़ सकते। शायद कवि लोग जो अकसर अपना सारा लेखन कागज पर उतारने से पहले ही अपने मन में कर लेते हैं, इससे ज्यादा प्रभावित नहीं होते। जो कागज पर कुछ लिखने से पहले सब दिमाग में लिखकर ठीक कर लेते हैं। (लेखकों के मुकाबले कवि कान पर ज्यादा निर्भर रहते हैं)। वैसे भी देख नहीं पाने का अर्थ यह नहीं है कि पुनरीक्षण नहीं किया जाता। क्या हम कल्पना नहीं करते हैं कि मिल्टन की बेटियां दिन भर बोल कर लिखवाए गए 'पेराडाइज लॉस्ट' की पंक्तियों को शाम को अपने पिता को पढ़कर सुनाती थीं और फिर उनके द्वारा कराए गए सुधारों को नोट करती थीं?

किंतु गद्य लेखक जो कि शब्दों के काठ-कबाड़ के बीच काम करते हैं, सब कुछ अपने दिमाग में नहीं रख सकते। उन्होंने जो लिखा हैं उसे उन्हें देखने की आवश्यकता पड़ती है। यहां तक कि वे लेखक

जो कि ज्यादा स्पष्ट लगते हैं और काफी लिखते हैं, इसे निश्चय ही महसूस करते हैं। (इसीलिए सार्त्र ने जब वह अंधे हो गए तो यह घोषणा की थी कि उनके लिखने के दिन पूरे हो गए हैं)। भारी-भरकम और परेशानी हेनरी जेम्स की कल्पना कीजिए जो कि लैम्ब हाउस में घूम-घूम कर सेक्रेटरी को 'गोल्डन बॉउल' लिखवाया करते थे। जेम्स के अंत का लेखन कैसे लिखा गया होगा की कल्पना करने की तकलीफ को एक तरफ छोड़ दिया जाए और सन् 1900 के रेमिंग्टन टाइपराइटर के हल्ले को भी याद न किया जाए तो भी क्या हम यह कल्पना नहीं कर सकते कि जो टाइप किया जाता था, जेम्स उसे दोबारा पढ़ते थे और उसमें जबर्दस्त सुधार करते थे।?

दो साल पहले जब मैं फिर से कैंसर से पीड़ित हो गई और मुझे अपनी पुस्तक *इन अमेरिका,* जो कि समाप्ति के कगार पर थी, को अलग रखना पड़ा, मेरे एक प्यारे मित्र ने, जो मेरा यह डर और हताशा जानते थे कि अब मैं इस पुस्तक को कभी पूरा नहीं लिख पाऊंगी, जब तक जरूरत हो, नौकरी से छुट्टी लेकर मेरे पास न्यूयार्क आकर रहने का प्रस्ताव रखा, ताकि बाकी का उपन्यास मैं उन्हें बोल कर लिखवा सकूं। सच यह है कि पहले के आठ अध्याय पूरे हो चुके थे (यानी कई बार पढ़े और फिर से लिखे जा चुके थे)। मैंने अंतिम से पहले वाला अध्याय शुरू कर दिया था और मुझे ऐसा लगता था कि उन दोनों अध्यायों का वृतांत मेरे दिमाग में बिल्कुल तैयार है। इस पर भी मुझे उनके इस मार्मिक प्रस्ताव को मना करना पड़ा।

ऐसा नहीं था कि मैं पहले ही प्रचंड केमो (केमो थेरेपी) कॉकटेल और ढेर सारी दर्द मारने की दवाओं के कारण इतना चकरा गई थी कि मुझे यह याद नहीं रहा कि मैं क्या लिखना चाहती थी। केवल सुनना ही नहीं, मुझे यह देखने में भी सक्षम होना चाहिए था कि मैंने आखिर लिखा क्या है। मुझे उसे फिर से दोबारा पढ़ने में भी समर्थ होना चाहिए था।

प्रायः पढ़ना लिखने से पहले होता है और लिखने की इच्छा भी पढ़ने से ही जागृत होती है। पढ़ना, पढ़ने से प्रेम ही आपको लेखक बनने का सपना दिखाता है। और आपके लेखक बन जाने के बहुत समय बाद भी, दूसरों द्वारा लिखी किताबें--अतीत में पढ़ी गई प्रिय किताबों का पुनर्पठन--लेखन से भटकने का एक जबर्दस्त आकर्षण होता है। भटकाव। सांत्वना। यातना। और हां, प्रेरणा।

जाहिर है सारे लेखक इसे स्वीकार नहीं करेंगे। मुझे याद आ रहा है, एक बार मैंने अपने बहुत ही पसंदीदा 19वीं सदी के जानेमाने उपन्यास के बारे में, यह मानते हुए कि मेरे साहित्य प्रेमी सभी परिचित इसके प्रसंशक होंगे, वी.एस नायपॉल से कुछ कहा था। परन्तु उन्होंने कहा, नहीं मैंने उसे पढ़ा ही नहीं है। उन्होंने मेरे चेहरे पर हैरानी के भाव देखते हुए सख्ती से कहा, ''सूसन मैं एक लेखक हूं, पाठक नहीं।''

बहुत सारे लेखक जो अब युवा नहीं हैं, किन्हीं कारणों से बहुत कम पढ़ते हैं, यह मानते हैं कि वास्तव में पठन और लेखन में कोई बहुत संगति नहीं है। शायद कुछ लेखकों के लिए ऐसा ही है। यह निर्णय करना मेरा काम नहीं है। यदि यह चिंता प्रभावित हो जाने की है तो मुझे यह बेकार की सतही चिंता लगती है। पर अगर कारण समय की कमी है-- एक दिन में अंततः सीमित घंटे होते हैं, इसलिए

वे जो पढ़ने में व्यतीत होते हैं, तो स्पष्ट है कि वे उस समय में से घट जाते हैं जो लिखने के लिए इस्तेमाल किए जा सकते थे-- तो फिर यह सन्यास है जिस में मेरी कोई आस्था नहीं है।

स्वयं को किताब में खो देने का पुराना मुहावरा एक बेकार निष्क्रिय फंतासी नहीं, अपितु एक नशा है, यथार्थ का प्रतिरूप (मॉडल)। वर्जिनिया वुल्फ के एक पत्र में कही गई बात प्रसिद्ध है, "कभी-कभी मै सोचती हूं कि स्वर्ग एक अंतहीन पाठ है।" सचमुच ,यह एक स्वर्गीय काम है- वुल्फ के शब्दों में ही फिर से कहें तो, "पढ़ने का मतलब है अहं का पूरी तरह विलोप हो जाना।" बदकिस्मती से हम शायद ही कभी अपने अहं से मुक्त हो पाते हों। पढ़ना एक ऐसा निराकार चरम आनंद है जो हमे अहंकार विहीन करने के लिए पर्याप्त है।

पढ़ने, आनंददायक पढ़ने की तरह ,कथा लेखन - दूसरे के शरीरों में अवतरित होना - अपने को भूल जाने जैसा है। आज हर कोई यही सोचने लगा है कि लिखना आत्मसम्मान करने का एक तरीका मात्र है। जिसे आत्माभिव्यक्ति भी कहा जाता है। जैसा कि मान लिया गया है कि अब हम वास्तविक परहितवादी भावनाएं रखने के काबिल नही रहे हैं, हममें अपने अलावा किसी के बारे में लिखने की क्षमता भी नहीं रही है। लेकिन यह सच नही है। विलियम ट्रेवर ने गैर-आत्मकथात्मक लेखन की हिम्मत (बोल्डनैस) के बारे मे बताया है । आप उतना ही अपने आप से पलायन के लिए क्यों नहीं लिखेंगे, जितना संभव है, स्वयं को अभिव्यक्ति करने के लिए ? दूसरों के बारे में लिखना कहीं अधिक आकर्षक होता है।

यह कहने की जरूरत नही हैं कि अपने किरदारों में कुछ अंशों तक मैं भी होती हूं। *इन अमेरिका* में पौलेंड से मेरे प्रवासी जब 1876 में दक्षिणी कैलिफोर्निया पहुंचते हैं -- वे अनाहेयिम के गांव से जरा सा - बाहर होते उतना ही - रेगिस्तान में चहलकदमी करते हैं और एक ऐसी भयावह शून्यता से भर जाते हैं जो उनकी दृष्टि को ही बदल देती है यह लिखते हुए मैं वास्तव में 1940 के दौरान ऐरिजोना रेगिस्तान की अपने बचपन की स्मृतियों को अंकित कर रही थी - जिसके बाहर तब एक छोटा-सा कस्बा था, टुकसॉन। उस अध्याय के पहले ड्राफ्ट में दक्षिणी कैलिफोर्निया के रेगिस्तान में सागुआरोस (विशाल कैक्टस) थे। तीसरे ड्राफ्ट तक बहुत बेमन से मैंने सागुआरोस को निकाल दिया। (अफसोस की कोलेरेडो नदी के पश्चिम में बहुत कम सागुआरोस नहीं होते हैं।)

मैं जो लिखती हूं वह मेरे स्वयं के अलावा अन्य चीजों पर होता है। जैसा कि जो मैं लिखती हूं वह मुझसे अधिक विवेकशील होता है। क्यों कि मैं उसे दोबारा लिख सकती हूं। मेरी पुस्तकें वह सब जानती हैं, जो मैंने धीरे-धीरे बीच-बीच में सीखा था। और इतने वर्षों के लेखन के बावजूद पन्नों पर उत्कृष्ट शब्दों को उतार पाना आज भी आसान नहीं लगता है।

पढ़ने और लिखने में एक बड़ फर्क यहीं है। पढ़ना एक काम है, एक हुनर है, जिसमें समय और रियाज के साथ आप अवश्य ही महारथ हासिल कर लेते हैं। एक लेखक के रूप में आप के हिस्से में ज्यातर अनिश्चितताएं और बेचैनी ही आती है।

एक लेखक के रूप में इन सारी कमियों - कम से कम इस लेखक द्वारा - को महसूसना, इस कठिन विश्वास पर निर्भर करता है, कि साहित्य का महत्व है। बल्कि महत्व तो एक बहुत ही कमजोर शब्द है। क्योंकि ऐसी पुस्तके है, जो 'जरूरी' हैं, जिनको पढ़ते हुए आप जानते है कि आप इन्हें फिर पढ़ेंगे। सम्भव है, एक बार से अधिक। क्या इससे बड़ा कोई सम्मान है कि आपकी अपनी चेतना का विस्तार, भरण और दिशा साहित्य की तरफ हो?

ज्ञान की किताब, दिमागी चुहल बाजी का उदाहरण, संवेदनाओं का विस्तार करने वाला वास्तविक संसार को ईमानदारी से दर्ज करने वाला (सिर्फ दिमागी फितुर को नहीं) इतिहास के सेवक, विपरीत और विद्रोही भावनाओं का हिमायती... एक उपन्यास जो जरूरी महसूस हो उसमें इनमें से अधिकतर बातें हो सकती है और होनी चाहिए। जहां तक इस प्रश्न का सवाल है कि क्या ऐसे पाठक रहेंगे जो कथा के इस उच्च विचार से सहमत होंगे तो इसका वही जवाब है कि ''इस प्रश्न का कोई भविष्य नहीं है''। यह जवाब उन्होंने तब दिया था, जब उनसे पूछा गया था कि वह अपोलो में प्रातःकाल के कार्यक्रम में क्यों भाग लेते है। सबसे अच्छी बात है कि चलते रहना।

समयान्तर, जून 2005 में पृष्ठ 53-55 पर प्रकाशित

The editor of *Samyantar* has given his kind consent to produce this article on the website.